कश्मीर में शांति के लिए क्या पीडीपी और नेशनल कॉंफ्रेंस एक मंच पर आएँगे ?

क्या राजनाथ सिंह जी ने यह कह कर कि वे फिर कश्मीर आएंगे और 'मुख्यधारा' के दलों एनसी और पीडीपी के साथ साथ बीजेपी और कांग्रेस से विचार कर के घाटी में शांति लाने के लिए किसी मान्य प्रस्ताव की रूप रेखा तैयार करने का प्रयास करेंगे एक तरह से पीडीपी एवम एनसी को दुविधा में तो नहीं दाल दिया है ?

आज कश्मीर घाटी में धर्म और क्षेत्रवाद की दृष्टि से स्थिति अक्टूबर १९४७ से कहीं ज्यादा ख़राब है जिस के लिए भारत की केन्द्र में रही सरकारें भी दोष लगने से नहीं वच सकतीं हैं । हाँ ,यह कहना भी गलत नहीं होगा कि केन्द्र के साथ साथ कश्मीर घाटी का मूलधारा का कहे जाने वाला नेत्रित्व कुछ ज्यादा ही दोषी है।

अक्टूबर १९४७ के दूसरे पखवाड़े में जब जम्मू कश्मीर रियासत की पाकिस्तान से लगती सीमा के पार से पाकिस्तान समर्थित आत्तंकी और आक्रमणकारी कश्मीर घाटी में घुसे थे तो जम्मू कश्मीर के महाराजा हरी सिंह की सेना एक तरह से अपना सर्वस्व लगा कर भी उन को रोक नहीं पाई थी और महाराजा हरी सिंह को श्रीनगर से रातो-रात सड़क मार्ग से जम्मू आना पड़ा था। वो दिन अंग्रेज शासित भारत के एक भाग के धर्म के आधार पर बंटबारे के दिन थे जब पाकिस्तान के नाम से एक मुस्लिम देश करीब २ माह पहले बाजूद में आ चूका था।

उस समय के वातावरण के मद्देनजर यह कहना भी गलत नहीं होगा कि एक सामान्य हिंदु का झूकाब भारत की ओर और एक सामान्य मुस्लिम का झुकाब पाकिस्तान की ओर होना उस समय अस्व्भाविक नहीं था ।हाँ पर एक बड़ी संख्या ऐसा होने के बाबजूद भी धर्म के नाम पर बंटवारे के खिलाफ थी और यह बात कश्मीर घाटी पर पूरी तरह लागू होती थी ।क्यों कि अगर ऐसा न होता तो उस समय कश्मीर घाटी में ९०% से ज्यादा मुस्लिम अबादी थी पर फिर भी पाकिस्तान द्वारा भेजे गए हम्लावरों का कश्मीर घाटी के मुस्लिम ने साथ देना तो दूर, पूरी तरह से विरोध किया था।

उस समय पाकिस्तान समर्थक कुछ लोग जरूर कश्मीर घाटी में भी थे पर उन की संख्या बहुत निम्न स्तर की थी ।अगर ऐसा न होता तो महाराजा हरी सिंह के लिए शायद श्रीनगर से निकल पाना कठिन होता और भारतीय सेना जो २७ अक्टूबर सुबह कश्मीर पहुंची थी हम्लाबरों को इतनी आसानी से खदेड़

नहीं पाती । इतना ही नहीं उस समय स्थानीय मुस्लिम समाज की ओर से घाटी में रह रहे हिन्दु पर भी घाटी छोड़ने और जान माल की हानी का वैसा दबाव नहीं दिखा जैसा के अधिमिलन के ४ से ५ दशक वाद (१९९० के वाद) दिखा है।

१९४७ अक्टूबर के वाद कश्मीर घाटी के मुख्य धारा के कहे जाने वाले नेताओं ने अपने राजनीतिक स्वार्थ के लिए जम्मू कश्मीर की राजनिति को मुख्यधारा से परे रखने कि नीति अपनाए रखी और केन्द्रीय नेत्रित्व ने भी कश्मीर घाटी के परे देखने की कोशिश नहीं की । इस का प्रणाम यह हुआ कि भारत विरोधी और धर्म आधारित राजनिति में विश्वास रखने वाले तत्व भी फलने-फूलने लगे और इस से भारत विरोधी अलगाब्बाद बढ़ने लगा । और स्थिति यहाँ तक पहुँच गई कि आज २६ साल बाद भी अधिकांश हिन्दू कश्मीर घाटी को साल १९९० में छोड़ने के बाद भी कश्मीर घाटी वापिस नहीं जा सका है।

जम्मू कश्मीर की राजनिति आज जिस स्थिति में पहुँच चुकी है उस में आज स्थानीय स्तर पर अलगाब्बादी और मुख्यधारा की विचारधारा के बीच रेखा खींचना आसान नहीं है। पीडीपी का सेल्फ रूल फ्रेमबर्क पर आज तक न कांग्रेस और न ही बीजेपी ने कोई प्रश्न लगाए हैं।

इस लिए यह कहा जा सकता है अक्टूबर १९४७ के भारत के साथ अधिमिलन होने के बाद जिन को मूलधारा का नेत्रित्व कहा जाता था उन्हों ने भी एक तरह से जो भारत विरोधी घाटी निबासी १९४७ में लघुसंख्यक थे उन को अपना विस्तार करने से नहीं रोका। यह भी कहा जा सकता है उन को अपना प्रभाव बढाने में कश्मीरियत और विशेष सम्बन्धों जैसे विषयों का प्रयोग केंद्र पर दवाव बनाने के लिए करते हुए भारत एवम अधिमिलन विरोधी तत्बों को अपना प्रभाव बढ़ाने में नेशनल कॉन्फ्रेंस और पीडीपी जैसे दलों ने एक तरह से सहायता की है। फारूक अब्दुल्लाह की नेशनल कांफ्रेंस ने भारत के साथ जम्मू कश्मीर के अधिमिलन की पूर्णत: पर कभी भी प्रश्न नहीं उठाए थे , यहाँ तक कि फारूक अब्दुल्लाह हुर्रियत से सख्ती से निपटने की वात करते रहे हैं पर साल २००२ के वाद और साल २०१० आते-आते घाटी की राजनिति केन्द्र सरकारों की असंबेधनशीलता के कारण जिस दिशा में चलती दिखी उस कारण नेशनल कांफ्रेंस के कुछ नेताओं पर भी मर्जर के नाम पर कुछ अनचाही राजनिति करने का दवाव पड़ता दिखा है।

यही नहीं भारत के कुछ बुद्धिजीवियों और वरिष्ठ पत्रकारों ने भी “कश्मीर” (जम्मू कश्मीर) को एक १९४७ के भारत विभाजन से जुड़े विषय की तरह देखा है और कुछ तो २०१६ में भी देख रहे हैं।

आजाद भारत में अब तक जम्मू कश्मीर रियासत की राजनिति को केन्द्र ने हमेशा कश्मीर घाटी केन्द्रित नीतिओं से समझा और कश्मीर घाटी मूल के ‘मुख्यधारा’ के कुछ नेत्रित्व की दृष्टि से परखा है। यही कारण है कि पिछले कुछ सालों तक भारत के अधिकांश बुद्दिजीवी भी जम्मू कश्मीर रियासत को सिर्फ कश्मीर घाटी से निकले विवादों, वक्तव्यों और परिभाषाओं से ही पहचानते थे । यहाँ तक कि आज की कश्मीर घाटी जो इस रियासत (पाकिस्तान और चीन के कब्जे वाले भाग को छोड़ कर) का सिर्फ १५ % क्षेत्रफल भी नहीं है की शक्ल में ही जम्मू कश्मीर को संवोधित किया जाता रहा है। यही नहीं पाकिस्तान द्वारा कब्ज़ा किए करीब ८५००० वर्ग किलोमीटर जम्मू कश्मीर के इलाके को जिस में १९४७

की कश्मीर घाटी का करीब ७००० वर्ग किलोमीटर इलाका ही है को पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर कहा जाता रहा है जब के पाकिस्तान के कब्जे में अधिकांश भाग १९४७ के पहले के जम्मू क्षेत्र और लद्दाख (गिलगित बल्तिस्तान) क्षेत्र से है । साल २०१० से बाद जरूर गिलगित बल्तिस्तान की कुछ बात भी भारतीय नेताओं ने शुरू की है पर अब भी उन की सोच पर 'कश्मीर' भारी है क्यों कि अब भी पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर और गिल्गित्बल्तिस्तान कह कर पाकिस्तान अधिकृत इलाकों को बोला जाता है, जो उचित नहीं है।

संक्षेप में अगर कहें तो राजनीतिक दलों को जम्मू कश्मीर की राजनिति को केन्द्र के साथ प्रतिस्पर्धा और अन्तराष्ट्रीय झंझालों से बाहर निकालना होगा।

"शीर्ष" पर बैठे नेताओं को आम जन के बीच जाकर उस का विश्वास जीत जन मानस के मन की आज की स्थिति को परखना होगा और उन के मन में घर कर चुकी शंकाओं के कारणों को समझकर उनके निवारण का अभियान चलाना होगा।

यहाँ तक क्षेत्रीय दलों का प्रश्न है आज के दिन ऐसा करने का दायित्व जम्मू कश्मीर पीडीपी के नेत्रित्व पर कुछ ज्यादा ही है क्यों कि यह दल सत्ता में है। लेकिन पीडीपी के साथ साथ डॉ फारूक अब्दुल्लाह की नेशनल कांफेर्नस पर भी दायित्व कुछ कम नहीं है।

इस से पहले कि पीडीपी और नेशनल कांफ्रेंस का नेत्रित्व आम जन के बीच जाए, उन को पहले अपने ऑटोनोमी और सेल्फ रूल फ्रेमवर्क पर चर्चा कर के एक आम सहमति वाला मसोदा तैयार करना होगा जिस को कम से कम यह दो दल तो भारत सरकार के साथ चर्चा में ला सकें । यदि यह दल जम्मू कश्मीर को पूरी तरह भारत समझते हैं तो इन को यह भी मान कर चलना होगा की इन के द्वारा बनाएया कोई भी मसोदा गिलानी/ उमर फारूक / यासीन मालिक को आज के दिन मान्य नहीं होगा, पाकिस्तान की बात तो दूर है। इस लिए इस के साथ साथ महबूबा मुफ़्ती और उमर अब्दुल्लाह जैसे नेतायों को आज तक के मिथ्या प्रचार के कारण राह भटक चुके कश्मीरी समाज के वीच जाकर अथक परिश्रम करने को अपने को तैयार करना होगा। और अलगाबबादियों और पाकिस्तान से निपटना भारत सरकार पर छोड़ना होगा। अगर यह दल ऐसा नहीं करते तो फिर जकिनन यह भी जम्मू कश्मीर में सामन्य हालात नहीं चाहते हैं और फिर तो कश्मीर घाटी समस्याओं से झूझती रहेगी।

क्या यह दल (पीडीपी और एनसी) कश्मीर घाटी के बहुसंख्यक आम जन के मन में घर कर चुकी शंकाओं के कारणों को समझने एवं उनके निवारण के रास्ते उन का विश्वास जीत कर दूंदने का अभियान चलाएंगे ?

हाँ दिल्ली में बैठे नेताओं को भी बैचारिक स्तर पर कश्मीर घाटी में घर कर चुकी शंकाओं और मिथ्याओं को दूर करने के लिए कठिन परिश्रम करना होगा जिस के लिए आर्थिक सहायता और अप्पीज्मेंट में शांति ढूँढने वाले सलाहकारों के 'परिवार' को भी 'सेवा निब्रित' करना होगा । गृहमंत्री राजनाथ सिंह जी ने कुछ बदलाव की निति अपनाने के संकेत जरूर दिए हैं । वे कहाँ तक जा पाते हैं यह देखना होगा।

(दया सागर एक बरिष्ठ पत्रकार और जम्मू कश्मीर विषयों के अध्येता हैं-संपर्क 941979609)